International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
ISSN -2393-8048, July-December 2022, Submitted in November 2022,iajesm2014@gmail.com

रांगेय राघव प्रणीत उपन्यास 'कब तक पुकारूँ' में दलित चेतना

अशोक कुमार बगावत,अतिथि सहायक आचार्य,(हिन्दी),राजकीय महाविद्यालय,रायपुर भीलवाड़ा (राजस्थान)

चार्तुवर्ण्य व्यवस्था भारतीय संस्कृति की अपनी एक विशेषता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों पर आधारित चार्तुवर्ण्य व्यवस्था श्रग्वेदकाल से लेकर आज तक अपने किसी न किसी रुप में विद्यमान रही है। वेदों श्रुतियों, स्मृतियों, पुराणों में व्यक्त जीवन पद्धति चार्तुवर्ण्य के चार सोपानों पर टिकी हुई है। यह प्रारम्भ में व्यवसाय पर निर्भर था तथा उसका जाति-श्रम से कोई सम्बन्ध नहीं था लेकिन आगे चलकर सबसे निम्न कोटि में आने वाला चौथा वर्ण शूद्र पर सारा बोझ आ गया। तीनों वर्णो को सेवा प्रदान करने वाला वर्ग 'दलित' कहलाने लगा। 'दलित' शब्द के संकुचित अर्थ के अन्तर्गत केवल निम्न वर्ग के अस्पृश्य लोगों का समावेश होता है। यह संकुचित अर्थ हिन्दू जाति व्यवस्था का बोध कराता है एवं चमार, भंगी, मेहता जैसी उपजातियों को अपने निकटतम कर लेता है। यह अर्थ विशिष्ट वर्ग, जाति-भेद और हिन्दू जाति व्यवस्था मान्य किए लोगों के समूह का अर्थबोध कराता है परन्तु आधुनिक युग में दलित को जाति महत्त्व न देकर मनुष्य की पतितावस्था, दुरवस्था तथा लाचारी और शोषण को देखा जाता है। सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक दृष्टि से जिसका शोषण होता है, स्वतन्त्रता, समता और प्रगति से अपरिचित रहकर जो अपने मालिक की प्रामाणिक दासता निभाता है और जिसके जीवन में ज्ञान या प्रकाश के अभाव में अज्ञान या अँधेरा छाया रहता है, ऐसा व्यक्ति 'दलित' है।

'चेतना' शब्द का सम्बन्ध 'मनोविज्ञान' से है। चेतना शब्द 'चेतन' से या सुक्ष्म दृष्टि से देखें तो 'चेत्' से बना है 'चेत्' शब्द 'चेतस' का पर्याय है जो संस्कृत से ग्रहण किया गया है। चेतना शब्द का प्रयोग ज्ञान, होश, बुद्धि, चेत और जीवन के अर्थ में किया जाता है। संस्कृत में इसका अर्थ-आत्मा, जीवन, परमात्मा, मनुष्य, प्राणी, मन आदि से होता है। 'चेतना' शब्द का प्रयोग अकर्मक एवं सकर्मक दोनों क्रियाओं में भिन्न अर्थ प्रदान करता है। अकर्मक क्रिया के अर्थ में होश में आना, बुद्धि, विवेक से कार्य लेना, सावधान होना एवं सकर्मक क्रिया के अर्थ में 'सोचना-विचारना' आदि अर्थ होते हैं। अंग्रेजी भाषा में 'चेतना' शब्द के लिए 'कान्शनेस' शब्द प्रयुक्त होता है जिसका अर्थ है- आन्तरिक ज्ञान अथवा चेतना, जागरुकता। दर्शनशास्त्र के अनुसार-चेतना विचारों, अनुभूतियों और संकल्पों की आनुषंगिक दशा, स्थिति अथवा क्षमता है। साहित्यकोश के अनुसार-चेतन मानव की प्रमुख विशेषता चेतना है अर्थात् वस्तुओं, विषयों, व्यवहारों का ज्ञान। लोके के अनुसार मनुष्य के अपने मन में जो कुछ घटित होता है उसका प्रत्यक्ष ज्ञान चेतना है। मनुष्य चिन्तनशील प्राणी है वह कभी चिन्ता कर लेता है। चिन्ता द्वारा ही चेतना जागरुक होती है। मनुष्य को गति भी चेतना द्वारा ही मिलती है। हिन्दी में चेतना शब्द का अर्थ-ज्ञानमूलक मनोवृति, बुद्दि, समक्ष, होशोहवास, स्मृति, याद आदि होता है। इस प्रकार चेतना शब्द आत्मा और बुद्धि दोनों से संबंधित है। दलित चेतना सामाजिक चेतना से सम्बन्धित है। मनुष्य समाज में विशेष करके दलित समाज में आई हुई जागृति एवं अपने अधिकारों के प्रति आई हुई सजगता को "दलित चेतन" से अभीहित करता है। वस्तुत: "दलित चेतना" दलितों के मूलभूत अधिकार एवं स्वतंत्रता की प्रतिष्ठा है। साहित्य में दलित चेतना से अभिप्राय है कि साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से अस्पृश्य हरिजनों की आर्थिक सामाजिक धार्मिक राजनीतिक समस्याओं को जनता से रु-ब-रु करवाता है। ऐसे लोगो पर हुए अन्याय अत्याचार को वाणी देना, अधिकारों के प्रति जागरूक करना, उसके दर्द, घुटन, पीड़ा को व्यक्त करना साहित्य 'चेतना' के नाम से पुकारा जाता है। हिन्दी का गद्य-साहित्य पद्य की तुलना में अधिक समृद्ध है। गद्य में दलितों की पीड़ा, व्यथा आदि को व्यक्त किया जाता है।

उपन्यास गद्य की महत्त्वपूर्ण व सशक्त विधा है। इसी प्रकार की "दलित चेतना" 'रांगेय राघव' प्रणीत 'कब तक पुकारूँ' उपन्यास में सुखराम पात्र के द्वारा उपलब्ध होती है। रांगेय राघव हिन्दी के विशिष्ट उपन्यासकार, कहानीकार, निबन्धकार, व आलोचक के रूप में जाने जाते है। इनका वास्तविक नाम तिरुमल्लै नंवाकम वीर राघव आचार्य था। मूल रूप से आंध्रप्रदेश के रहने वाले थे। सामाजिक और समाजवादी मूल संवेदना इनकी कृतियों में यत्र तत्र दिखाई पडती है। सन् 1946 'घरौंदा' उपन्यास के जरिये वो प्रगतिशील उपन्यासकार के रूप में चर्चित हुए। 12 सितम्बर 1962 को मुंबई में इनकी मृत्यु हो गई। 'कब तक पुकारूँ' राजपाल प्रकाशन से 2002 में प्रकाशित 447 पृष्ठों का उपन्यास है।

रांगेय राघव जी ने मध्य प्रदेश, राजस्थान के कर्नट लोगों की जिन्दगी के यथार्थ को प्रस्तुत किया है। यह लोग दिन में छोटे-छोटे तमाशे दिखाते हैं और रात में मौका पाकर छोटी मोटी चोरियाँ भी कर लेते है। उनकी स्त्रियाँ प्राय बड़े लोगों तथा पुलिस के अधिकारियों की वासना पूर्ति करती हैं। यह सब उन लोगों के लिए गलत नहीं है। उन स्त्रियों को भी यह शोषण इतना रास आ गया है कि उसे लेकर उनके मन में कोई मानसिक ऊहापोह नहीं होती। सुखराम की पत्नी प्यारी पर दरोगा मोहित हो जाता है और वह उसे थाने बुलाता है तब प्यारी सुखराम के भय से इन्कार कर देती है। सुखराम दूसरों नटों जैसा नहीं हैं क्योंकि वह अपने को ठाकुर का लड़का समझता है। अन्य कर्नट ऐसी बात को बुरा नहीं मानते बल्कि उनकी आखों का पानी इतना सूख गया है कि वे ऐसी बात में अपना सौभाग्य समझते है कि उनकी पत्नियों को दरोगा जैसा व्यक्ति बुलाता है। सुखराम के भय से प्यारी जब इन्कार करती है तब उसकी मां उसे समझाती है "अरी ये तो औरत का काम है। उसमें बुरा-भला क्या? कौन नहीं करती?"

प्रस्तुत उपन्यास में रांगेय राघव ने ग्रामीण जीवन को एक-दूसरे ही स्तर पर रखा है, जिस प्रकार नागार्जुन ने, 'वरूण के बेटे' में मछुआरों की व्यथा को व्यक्त किया है, उसी प्रकार यहां लेखक ने राजस्थान के कर्नटों के आर्थिक शोषण तथा सामाजिक पतन को चित्रित किया है। उपन्यास के नायक सुखराम की मां नटनी थी। पिता भी कर्नट था पर वह अपने आपकों अधूरे किले के स्वामी का वंशज मानता था। उसके दादा वंशच्युत होकर कर्नट बन गए थे । कुलाभिमान की इस बात को लेकर सुखराम के माता पिता के बीच झगडे होते रहते थे जिसके परिणाम स्वरुप उन दोनों की आकस्मिक एवं अकाल मृत्यु हो जाती है फलत: सुखराम इशिला कर्नट और उसकी पत्नी के संरक्षण में पालित पोषित होकर बड़ा होता है। सुखराम भी दूसरें कर्नटों की तरह विचरणशील जीवनयापन करता है। उसे कर्नटों की जिन्दगी से नफरत है क्योंकि वह सर्वथा उपेक्षित जनजाति है। इस जाति को अपराधजीवी करार दिया गया है। कंजर, भोग्या, बाबरी इत्यादि जातियों की भांति कर्नटों को भी एक जरायम पेशा जाति माना गया है। उच्चवर्गीय समाज में इन जातियों के लोगों के साथ गालीवाची शब्द प्रयोग होते हैं।

इशिला के परिवार में रहते हुए उसकी बेटी प्यारी सुखराम को अपना मरद बना लेती है। अपनी मूर्खता के कारण सुखराम और प्यारी रूस्तमखां के चंगुल में फंस जाते हैं और प्यारी को रूस्तमखां के पास रहना पड़ता है। उन दिनों में सुखराम की भेंट कजरी नामक एक दूसरी तेज तर्रार कर्नटी से होती है।

सुखराम का व्यक्तित्व बहुरंगी और आकर्षक है। वह वीर, दलेर, बहादुर व संघर्षशील हैं। परन्तु परिस्थितियों के सामने उसे परास्त होना पड़ता है। प्यारी व कजरी रूस्तमखां के अत्याचारों से उत्पीड़ित होकर एक दिन उसकी हत्या कर देती हैं। दूसरी तरफ धूपों नामक चमारिन के साथ बांके तथा दो ठाकुर बलात्कार करते है। बांके रूस्तमखां के घर जा छिपता है। इस घटना से विक्षुब्ध होकर चमारों की भीड़ बांके से बदला लेने हेतु रूस्तमखां के मकान की ओर बढ़ती है और निरोती नामक एक व्यक्ति रूस्तमखां के मकान को आग लगा देता है। बांके और रूस्तम की लाशें उसमें जल जाती हैं। कजरी और प्यारी को साथ: लेकर सुखराम भागते हुए कर्नटों के एक समुदाय में शामिल हो जाता है। वहां बीमारी से प्यारी की मृत्यु हो जाती है।

रूस्तमखां और बांके वाली घटना के बाद पुलिस का कहर चमारों पर टूट पड़ता है। कई बेकसूर और निर्दोष चमारों को पकड़कर हिरासत में ले लिया जाता है और उन पर तरह-तरह के अत्याचार होते हैं। महिलाओं की इज्जत लूटी जाती है। जब सुखराम को इस बात का पता चलता है तो उसका खून खौल उठता है। वह प्रतिशोध स्वरूप डाकुओं के दल में शामिल हो जाता है। डाकुओं और पुलिस के बीच जो मुठभेड़ होती है उसमें कई सिपाही मारे जाते है। एक बार उसी डाकू दल का सरदार उस क्षेत्र के पोलिटिकल एजेन्ट सायर की बेटी सुशन को पकड़ लेता है और उसके साथ जबरदस्ती करना चाहता है, तभी वहां सुखराम पहुंच जाता है और पिस्तौलधारी डाकू सरदार के साथ मुकाबला करता हुआ सुशन को उसके पंजे से मुक्त करवा लेता है। सुखराम की बहादुरी को देखते हुए उसे एजेन्ट के यहां नौकरी मिल जाती है। यहीं पर उपन्यास की कथा एक नया मोड़ लेती है। सुशन ने युरोपियन समाज तो देखा था परन्तु भारत उसके लिए एक रहस्य था। सुखराम ने जब उसे अधूरे किले का किस्सा सुनाया तो वह खुद को पूर्व जन्म की ठकुराइन समझने लगी। इसी बीच में सुशन के साथ हादसा हो जाता है। लोरेन्स नामक एक अंग्रेज सुशन के साथ बलात्कार करता है। सुखराम और पोलिटिशियन सायर दोनों द्वारा लारेन्स को पीटा जाता है। सायर लारेन्स को मार देना चाहता है परन्तु सुखराम सायर को समझाता है। इसी बीच सुखन मां बन जाती है। कजरी और सुखराम सायर को उस बच्चे को पालने का वायदा करते है। इसी बीच मुम्बई में कजरी की मृत्यु हो जाती है। सुखराम अकेला सुशन की बच्ची को लेकर समाज में लौट आता है। उधर सुशन इग्लैंड चली जाती है। सुखराम बच्ची का नाम चन्दा रखता है और बेटी की तरह उसका पालन-पोषण करता है। चन्दा युवा होने पर अपने ही गांव के ठाकुर से प्रेम करने लगती है। नरेश भी उसे चाहता है। दोनों का प्यार ऊँच-नीच, जाति-पाति के बन्धनों से परे है। चन्दा भी अपनी मां की भांति खुद को ठुकराईन मानने लगती है। अधूरे किले में पहुंचकर चन्दा का व्यवहार बदल जाता है। वह अनजाने स्थानों को ऐसी देखती है जैसे वह उन्हें पहचानती हो। एक दिन अचानक 15 वर्ष बाद सायर का एक पत्र सुखराम के नाम आता है जिससे चन्दा को ज्ञात हो जाता है कि वह नटनी नहीं एक अंग्रेज मां की बेटी है। फलत: वह स्वयं को नरेश के सर्वथा योग्य समझती है। चन्दा एक बार फिर अधूरे किलें में पहुँच जाती है। सुखराम उसे खोजते हुए वहां पहुंचता है। सुखराम देखता है कि चन्दा बिल्कुल ठकुराईन सा व्यवहार करती है। चन्दा के इस व्यवहार से सुखराम को विश्वास हो जाता है कि ठकुराईन की आत्मा बार-बार जन्म लेती है और चन्दा में वही आत्मा है। अतः सुखराम ठकुराइन की आत्मा को मुक्त करने के लिए चन्दा की हत्या कर देता है और थाने में जाकर अपना जुर्म कबूल कर लेता है।

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास समानान्तर दो कथाओं को लेकर चलता है। पोलिटिकल एजेन्ट सायर और सुशन को लेकर जो कथा चलती है उसमें सुखराम के चरित्र को हम एक ऊँचाई पर देखते है परन्तु इसके साथ ही कर्नटों की पारिवारिक व्यवस्था, जाति व्यवस्था, स्त्री-पुरूष संबंध, यौन-स्वच्छन्दता, अशिक्षा, अज्ञान, वैयक्तिक स्वतंत्रता, दीनता, उपेक्षा, पुलिस-उत्पीड़न, अंधविश्वास, नवीन चेतना का अभाव इत्यादि आयामों का उपन्यासकार ने सूक्ष्म, यथार्थ एवं हदयग्राही वर्णन किया है। नटों के कौशल, साहस व शौर्य का अच्छा परिचय मिला है।

यौन स्वच्छन्दता कर्नटों की एक विशेषता है। वे इसमें सामाजिक वर्जनाओं को नहीं मानते। एक स्थान पर प्यारी सुखराम से कहती है, "देख मैं भंगिन, चमारिन नहीं जो मरद की गुलाम बनकर रहूं। मैं तो खेलूंगी पर मेरा मन तो तेरा है। जिस दिन मन तुझसे हट जाएगा, मैं तुझे छोड़कर चली जाऊंगी।" कर्नट स्त्रियों को अपने मरदों के ऐब भी अच्छे लगते हैं। जो कर्नट अपनी औरत को न पीटे, जो चोरी न करे, जो जुआ न खेले, जो गाली न बोले उसे वे मर्द नहीं मानती। प्यारी की मां सोनू अपने इशिला से सुखराम के विषय में कहती है, "वह शराब पीता है किसी भी लड़की के साथ एक दिन भी नहीं पाया गया। कौन सा जवान है जो यह नहीं करता। वह गाली भी नहीं देता जो मर्दानगी की निशानी है। चोरी वह नहीं करता, जुआ वह नहीं खेलता।"

सोना और इशिला की इन बातों को सुनकर सुखराम सोचता है, "क्यों मैं उनसा नहीं हूं जिनके बीच में रहता हूं। मैं क्यों नहीं नाचता, मैं क्यों नहीं गाता? सोलह साल की उम्र तक क्यों भूला रहा हूं। मेरी गोद में त्यारी सो रही है। वह मेरी बहू है। क्यों वह कंजरों में जाती हैं? मैं उसे छूरियों से गोद कर फैंक दूंगा, ससुरी मुझे छोड़कर कहीं गयी तो। "

"नटों में स्त्री-पुरूष दोनों ही कमाते है। स्त्री-पुरूष. से अधिक कमाती है। खेल-तमाशे में भी वह भाग लेती है और शरीर बेचकर भी कुछ कमा लेती हैं। इस कारण से पुरूष को छोड़कर या उसके साथ रहने में वह स्वतंत्र होती है। नट समाज में स्त्री को पुरूष से कम नहीं समझता जाता। यदि पुरूष स्त्री को पीट सकता है तो स्त्री भी हाथ उठा सकती है। एक स्थान पर सुखराम कहता है, मैं उसे रस्से से मारता। नील पड़ जाती परन्तु फिर मुझसे लिपटकर कहती- बैल समझकर मार ले निगौड़े। पर निपूते तेरी लुगाई हूं तभी न मारता है? मार ले। मैं क्या तेरी मार से डरती हूं मैंने उसे मारा पर उसे गुस्सा आ गया। उसके हाथ पर जूता पड़ा उसने खींचकर मारा !"

प्रस्तुत उपन्यास में डॉ. रांगेय राघव उपन्यासकार ने पुलिस द्वारा कर्नटों पर किये गये अमानुषी अत्याचारों का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। एक बार सुखराम और प्यारी किसी गांव में करतब दिखाने गये। पुलिस के दारोगा ने त्यारी को देख लिया और उस पर उसका दिल आ गया। थाने से प्यारी के लिए बुलावा आ गया। सुखराम प्यारी को मना करता है। इस प्रतिरोध के कारण सुखराम की पुलिस द्वारा खूब पिटाई होती है। वह बेहोश हो जाता हैं। सवेरे प्यारी जब उसके सिर में खून देखती है तो प्यारी की मां सोनू कहती है, "हां री जूते में कीलें रही होंगी। तेरे बाप के ऐसे बीसियों निशान पड़े होंगे।"

इस प्रकार नट पुरूष यदि औरत की इज्जत बचाने का प्रयत्न करता है तो उसे जूतों से मार पड़ती है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने दलित जातियों पर, सवर्ण वर्ग के लोग और पुलिस द्वारा किये गये अत्याचारों का मार्मिक चित्रण किया है। पुलिस निर्दोष दलित वर्ग के लोगों पर अत्याचार करती है और दूसरी तरफ उच्चवर्ग के लोगों को संरक्षण प्रदान करती है। उपन्यास का नायक सुखराम लेखक का चिकित्सक भी है। जिस रोग का इलाज बड़े-बड़े डॉक्टर नहीं कर पाते उसका इलाज वह सुखड़ियों के माध्यम से करता है। यह विद्या सुखराम को अपने पिता से मिली थी। इस प्रकार डॉ. रांगेय राघव ने कर्नटों के जीवन का समग्र चित्र सम्पूर्ण सहजता, स्वाभाविकता और तन्मयता के साथ किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

राघव रांगेय', कब तक पुकारूँ - पृ. 47-48

राघव रांगेय', कब तक पुकारूँ - पृ. 47-48

राघव रांगेय', कब तक पुकारूँ - पृ.. 28

राघव रांगेय', कब तक पुकारूँ - पृ.. 29

राघव रांगेय', कब तक पुकारूँ - पृ. 51

राघव रांगेय', कब तक पुकारूँ - पृ. 45

सिंह, (डॉ.) कुँवरपाल, उपन्यास हिन्दी "सामाजिक चेतना"

परमार (डॉ.) एन.एस. दलित चेतना और हिन्दी उपन्यास, चिन्तन प्रकाशन

SHRADHA EDUCATIONAL ACADEMY